Gurukul International Multidisciplinary Research Journal (GIMRJ)*with* International Impact Factor 8.357
Peer Reviewed Journal
https://doi.org/10.69758/GIMRJ/2508S01V13P013

e-ISSN No. 2394-8426
Special Issue on Scientific Research Aug'25
Issue–VIII(I), Volume–XIII

# 'मैं हिजड़ा....मैं लक्ष्मी': वैश्विक परिप्रेक्ष्य में परालैंगिक समुदाय की स्थिति का चित्रण

**डॉ. सन्मुख नागनाथ मुच्छटे,**
सहयोगी प्राध्यापक, हिंदी विभाग, श्री छत्रपती शिवाजी महाविद्यालय,
उमरगा, जिला धाराशिव(महाराष्ट्र)
मो. नंबर:९६८९०६३७१५
Email-sunmukhm@gmail.com

**शोध-सार:**
प्रस्तुत आलेख परालैंगिक समुदाय की ऐतिहासिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक स्थिति के बहुआयामी स्वरूप का गहन विवेचन करता है। प्राचीन सभ्यताओं से लेकर आधुनिक भारत एवं वैश्विक परिप्रेक्ष्य तक इस समुदाय की उपस्थिति, स्वीकार्यता और संघर्ष को साहित्य एवं सामाजिक जीवन के संदर्भ में परखा गया है। लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी की आत्मकथा "मैं हिजड़ा... मैं लक्ष्मी" इस समुदाय की सामूहिक पीड़ा, साहस और आत्मस्वीकृति का सशक्त दस्तावेज़ है। इसमें भारतीय समाज की बहिष्कृत मानसिकता के साथ-साथ पश्चिमी और एशियाई देशों में परालैंगिक व्यक्तियों की तुलनात्मक स्थिति प्रस्तुत की गई है। आलेख का निष्कर्ष यह प्रतिपादित करता है कि परालैंगिकता कोई विकृति नहीं, बल्कि प्राकृतिक लैंगिक विविधता है, जिसे स्वीकार करना और सम्मान देना सामाजिक न्याय एवं मानवाधिकार की अनिवार्यता है।

**मुख्य शब्द:** परालैंगिक समुदाय, तीसरा लिंग, मैं हिजड़ा... मैं लक्ष्मी, लैंगिक विविधता, औपनिवेशिक कानून, NALSA निर्णय 2014, परालैंगिक व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम 2019, मानवाधिकार विमर्श, सामाजिक स्वीकृति, वैश्विक तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य

**प्रास्ताविक:** मानवीय लिंग व्यवस्था में परालैंगिक समुदाय का इतिहास अत्यंत प्राचीन, वैविध्यपूर्ण और जटिल रहा है। सर्वसाधारण शब्दों में परालैंगिक व्यक्ति वे हैं जो पारंपारिक द्विलिंगी व्यवस्था (स्त्री–पुरुष) से परे होते हैं — जैसे ट्रांसजेंडर, हिजड़ा, किन्नर, जेंडरक्विअर आदि।वैश्विक मानवीय इतिहास में परालैंगिक समुदाय की उपस्थिति समाज में सदैव रही है,परंतु इनकी सामाजिक स्थिति में हमें कालानुरूप परिवर्तन दिखाई देता है। प्राचीन विश्व में परालैंगिक समुदाय के विविध संदर्भ प्राप्त होते हैं। मेसोपोटामिया, मिस्र, यूनान जैसी प्राचीन सभ्यता से परिपूर्ण देशों में परालैंगिक व्यक्तिओं का वर्णन प्राप्त होता है।इन वर्णनों द्वारा यह सिद्ध हो जाता है कि परालैंगिक व्यक्ति न ही स्त्री थे और न पुरुष।फिर भी धार्मिक या सामाजिक परिवेश में उनकी उपस्थिति महत्त्वपूर्ण मानी जाती थी। यूनानी और रोमन साहित्य में उभयलिंगी और लिंग परिवर्तन की कथाएँ उपलब्ध हैं।अफ्रीकी और अमेरिकी आदिवासी संस्कृतियों में परालैंगिक व्यक्तियों को आध्यात्मिक शक्ति से युक्त माना जाता था। भारतीय परिवेश में विविध धार्मिक और सांस्कृतिक ग्रंथों में परालैंगिक समुदाय में स्थित व्यक्तियों का संदर्भ प्राप्त होता है। प्राचीन भारत में परालैंगिक व्यक्तियों को समाज में एक विशेष स्थान प्राप्त था।'महाभारत' में अर्जुन का ब्रहन्नला रूप – स्त्रीवेश में शिक्षा देना।'रामायण' में भगवान राम के प्रति हिजड़ा समुदाय की भक्ति का उल्लेख। पुराणों और शिव संप्रदाय में भी उभयलिंगी देवताओं का वर्णन प्राप्त होता है। मध्ययुगीन काल में मुगल दरबार में परालैंगिक व्यक्तियों को शाही सेवक, गुप्तचर और प्रशासनिक पदों पर नियुक्त किया जाता था। अर्थात इस काल में इस समुदाय को समाज में उचित सम्मान प्राप्त था। लेकिन बदलते समय और काल के अनुरूप परालैंगिक समुदाय की स्थिति में भी परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। इस परिवर्तन को हिंदी साहित्य में विविध रचनाकारों ने अपनी रचनाओं के द्वारा अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है और उसके माध्यम से भारतीय और वैश्विक परिप्रेक्ष्य में स्थित परालैंगिक समुदाय की स्थिति का यथार्थ चित्रण किया है। लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी जी की 'मैं हिजड़ा...मैं लक्ष्मी' आत्मकथात्मक उपन्यास इसी श्रृंखला की एक कड़ी है।लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी द्वारा लिखित आत्मकथा "मैं हिजड़ा... मैं लक्ष्मी" का हिंदी संस्करण वाणी

प्रकाशन से १ जनवरी,२०१५ को प्रकाशित हुआ था। इस पुस्तक का अंग्रेज़ी अनुवाद "Me Hijra, Me Laxmi" के नाम से ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस द्वारा २०१५ में प्रकाशित किया गया।

भारतीय समाज और परालैंगिक समुदाय: भारत में अंग्रेजों की सत्ता स्थापित होने के बाद परालैंगिक समुदाय के बुरे दिनों का प्रारंभ हुआ। अंग्रेजों ने सन् १८७१ में 'Criminal Tribes Act' पास किया और इस कानून के अंतर्गत परालैंगिक समुदाय को 'अभियुक्त' की श्रेणी में रखा गया। फलस्वरूप परालैंगिक समुदाय की स्थिति भारतीय समाज में निम्नता की ओर अग्रसर हुई। इस कानून ने इस समुदाय को मुख्य धारा से अलग कर दिया और यह समुदाय समाज में उपेक्षित बन गया। समाज में इस समुदाय के प्रति सर्वसामान्यों की दृष्टि अत्याधिक मात्रा में हीन बन गई। २० वीं सदी में तो इस समुदाय की स्थिति अत्यंत दयनीय बन गई। स्वयं को सभ्य मानने वाले समाज ने इस समुदाय को सभी स्थानों से बहिष्कृत कर दिया। बहिष्कार के कारण यह समुदाय समाज के हाशिए पर पड़ गया। समाज के मुख्य धारा से अलग होने के कारण यह समुदाय भेदभाव, उपेक्षा,अशिक्षा, भिक्षावृत्ति और तिरस्कार का शिकार बन गया। पारंपारिक लिंग व्यवस्था द्वि-आधारी सोच पर आधारित है — केवल स्त्री या पुरुष। इसमें तीसरे लिंग की कल्पना नहीं के बराबर है। इसी कारण वर्तमान भारतीय सामाजिक परिप्रेक्ष्य में परालैंगिक समुदाय की स्थिति संघर्षपूर्ण और बहिष्कृत अवस्था में है।इस समुदाय को आमतौर पर 'हिजड़ा', 'किन्नर', 'थर्ड जेंडर' या 'ट्रांसजेंडर' के रूप में जाना जाता है। भारतीय घरों में जन्म लिए परालैंगिक व्यक्तियों को बाल्यावस्था से ही मजाक, हिंसा और उपेक्षा का सामना करना पड़ता है। वे अक्सर अपने परिवार से निष्कासित कर दिए जाते हैं और हिजड़ा समुदाय के अंतर्गत आ जाते हैं। समाज इन्हें अशुभ, अलग या भयावह के रूप में देखता है। शिक्षा, रोजगार और सामाजिक स्वीकृति के अभाव में इन्हें भीख माँगने, नाच-गाने या सेक्स वर्क जैसे काम करने पर मजबूर होना पड़ता है। रोजगार के क्षेत्रों में उन्हें स्थान नहीं दिया जाता।अधिकतर परालैंगिक व्यक्ति स्कूलों में भेदभाव और मानसिक उत्पीड़न के कारण पढ़ाई बीच में ही छोड़ देते हैं।भारतीय शैक्षणिक संस्थानों में लैंगिक विविधता की स्वीकृति का बहुत अभाव है।उन्हें उपयुक्त स्वास्थ्य सेवाएँ नहीं मिलतीं। अस्पतालों में उनके प्रति संवेदनशीलता का अभाव रहता है।
२१ वीं सदी में सन् २०१४ में NALSA बनाम भारत सरकार निर्णय द्वारा परालैंगिक व्यक्तियों को "तीसरे लिंग" के रूप में कानूनी तौर पर मान्यता मिली। परालैंगिक व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, २०१९ के तहत उनके संदर्भ में कुछ अधिकार सुनिश्चित किए गए।जैसे-पहचान पत्र, भेदभाव से संरक्षण आदि। धीरे-धीरे भारतीय परिवेश में फिल्मों, साहित्य और मीडिया के माध्यम से परालैंगिक समुदाय के प्रति समाज में थोड़ी-बहुत जागरूकता आ रही है। कुछ राज्य सरकारों ने परालैंगिक व्यक्तियों के लिए आरक्षण, स्वास्थ्य बीमा, और आवास योजनाएँ शुरू की हैं।कुछ परालैंगिक व्यक्तियों ने राजनीति, सामाजिक कार्य और संस्कृति में पहचान बनाई है – जैसे लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी, गौरी सावंत, शबनम मौसी आदि। फिर भी संपूर्ण समुदाय के स्तर पर प्रतिनिधित्व बहुत सीमित है।समकालीन वैश्विक परिप्रेक्ष्य में यूएन, डब्ल्यूएचओ और कई देशों ने परालैंगिक समुदाय को मान्यता दी है और उनका स्वीकार किया है। परिणाम स्वरुप उस समाज में यह समुदाय सम्मान के साथ जीवन जीता नजर आ रहा है। इसके विपरीत भारत में परालैंगिक समुदाय की स्थिति है।भारतीय समाज में परालैंगिक समुदाय की स्थिति संघर्षमय, बहिष्कृत, किंतु बदलती हुई है। हालाँकि कानूनी मान्यता और सामाजिक जागरूकता के प्रयास हो रहे हैं, परंतु वास्तविक सम्मान, समान अवसर, और सामाजिक स्वीकृति अब भी दूर की बात है। इस दिशा में शिक्षा, मीडिया, नीतियों और संवेदनशील समाज की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

'मैं हिजड़ा....मैं लक्ष्मी': वैश्विक परिप्रेक्ष्य में परालैंगिक समुदाय की स्थिति का चित्रण: प्रस्तुत आत्मकथात्मक उपन्यास में लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी जी ने न केवल अपने व्यक्तिगत जीवन की कहानी कही है, बल्कि भारतीय समाज में परालैंगिक समुदाय को लेकर फैली धारणाओं, भेदभाव और संघर्षों को भी बेबाकी से प्रस्तुत किया है।यह रचना सिर्फ एक व्यक्ति की आत्मकथा नहीं, बल्कि एक पूरे समुदाय की सामाजिक, सांस्कृतिक और मानसिक पीड़ा की सामूहिक अभिव्यक्ति है। यह कृति परालैंगिक समुदाय के प्रति संवेदना, समझ और सामाजिक बदलाव की माँग

करती है। प्रस्तुत आत्मकथात्मक उपन्यास का प्रारंभ "मैं लक्ष्मी हूँ – एक हिजड़ा।" इस वाक्य से हो जाता है।यह वाक्य सिर्फ एक पहचान नहीं, बल्कि स्वीकारोक्ति का साहसी उद्घोष है। लक्ष्मी अपने नाम, अस्तित्व और लिंग के भिन्न रूप को गौरवपूर्ण तरीके से स्वीकार करती हैं, जो आमतौर पर इस समुदाय के लिए दुर्लभ होता है। लक्ष्मी स्पष्ट रूप में स्वीकार करती हैं कि वे न तो 'स्त्री' हैं, न 'पुरुष' — वे परालैंगिक समुदाय की पात्रा हैं, जो तीसरे लिंग के रूप में एक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सामाजिक धरातल पर अपना अस्तित्व बनाए रखती हैं। लक्ष्मी अपने बचपन में अनुभव करती है कि समाज से अलग है। उसके शरीर में पुरुष के लक्षण होते हुए भी आत्मा स्त्रीत्व की ओर झुकी हुई थी, जो उन्हें लगातार आंतरिक द्वंद्व में डालती है। इस संदर्भ में लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी I.A.N.S. बताती हैं कि-"दोष आंख का नहीं, नज़रिए का है। लोगों को नजरिया बदलने की जरूरत है। जिस दिन यह बदला, सभी परेशानियां खत्म हो जाएंगी।"१ बचपन में लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी अक्सर बीमार रहती हैं। इसका उल्लेख उन्होंने आत्मकथा के आरंभ में ही किया है। वे बताती हैं कि "उसमें एक दुख की बात थी कि उसका पूरा बचपन बीमारी में बीता। लक्ष्मी का साथ अस्थमा, टाईफाइड,निमोनिया, मलेरिया ने कभी नहीं छोड़ा। जिसके कारण उसे तरह-तरह की पाबंदियां लगी रहीं। एक बार एक घटना घटी, स्कूल में स्टेज शो करते हुए लक्ष्मी की लूंगी का खुलने से जुड़ी है। दूसरी बीमारी के कुछ कंट्रोल होने पर देख-रेख,इधर मत जाओ, उधर मत जाओ, यहां मत खेलो, वहां मत खेलो। ऐसी तमाम बंदिशों में गुजरा था लक्ष्मी का बचपन।"२ बचपन में लक्ष्मी का सात साल की आयु में शारीरिक शोषण हुआ। साथ ही यह शोषण बार-बार होता रहा। इसके साथ ही उसका मानसिक शोषण भी चालू था। इन सब से वह प्रभावित हो जाती है और अपने अस्तित्व के संदर्भ में सचेत भी। इस संदर्भ में वह कहती है कि-"खामोश रहने पर मुझे सब लोग शायद 'सीधा लड़का' 'अच्छा लड़का' कहेंगे पर खामोशी कि मुझे और अधिक कीमत चुकानी पड़ेगी। अब आगे से जो बात अच्छी नहीं लगेगी उसके खिलाफ आवाज उठाऊंगा।जितना हो सके उतना पसंद न आने वाली बातों के सामने घुटने नहीं टेकूंगा।"३ लक्ष्मी के अंदर यह सोच बचपन में ही आई थी। इससे स्पष्ट हो जाता है कि खेलने-कूदने की उम्र में ही वह प्रगल्भ हो गई थी। आज भारतीय परिवेश में परालैंगिक समुदाय के सम्मुख विविध प्रश्न हैं। इन प्रश्नों पर प्रकाश डालते हुए प्रस्तुत उपन्यास में लक्ष्मी भारतीय सभ्य समाज को बताती है कि हम भी आम इंसान की तरह हैं। हमारा जन्म भी मां की कोख से हुआ है,जैसे आम जनता का होता है। लेकिन हम केवल परालैंगिक समुदाय के सदस्य होने के कारण हमें लैंगिक शोषण, घृणा, तिरस्कार आदि का सामना करना पड़ता है। साथ ही हमें समाज से बहिष्कृत भी किया जाता है। हमारे जीने के सभी रास्ते बंद कर दिए जाते हैं। परिणाम स्वरूप हम लोगों को भीख मांग कर या नाच गा कर या अपनी देह बेचकर अपना जीविकोपार्जन करना पड़ता है। क्या परालैंगिक समुदाय के सदस्यों को इस देश के समाज में सम्मान प्राप्त होगा?रोजगार प्राप्त होगा?जीने का अधिकार मिलेगा? उचित अधिकार प्राप्त होंगे?इन समस्त प्रश्नों को लक्ष्मी भारतीय सभ्य समाज के सामने उजागर करती है। इन सबसे हमें ज्ञात हो जाता है कि भारत में परालैंगिक समुदाय की स्थिति बेहतर नहीं है। इसीलिए लक्ष्मी परालैंगिक समुदाय के प्रति भारतीय जनमानस में बनी इस प्रतिमा को परिवर्तित करने के लिए अपनी ओर से विशेष प्रयास करती हैं। इसके लिए वे विविध देशों का भ्रमण कर वैश्विक स्तर पर परालैंगिक समुदाय की स्थिति का जायजा लेती है और उसके माध्यम से उनके महत्त्व को स्थापित करने का प्रयास करती हैं।

लक्ष्मी वैश्विक भ्रमण का आरंभ टोरंटो से करती हैं। वहां पर उन्हें एड्स के कॉन्फ्रेंस में आमंत्रित किया गया था। वहां पर उनकी मुलाकात भारतीय वंश की यास्मिन से होती हैं। यास्मिन भी परालैंगिक समुदाय की सदस्या हैं। दोनों टोरंटो में विविध स्थानों पर घूमते -फिरते हैं। वहां पर स्थित परालैंगिक समुदाय के लोगों के साथ लक्ष्मी संवाद स्थापित करती हैं। उनका जीवन करीब से देखती हैं। तब उन्हें एहसास होता है कि-"अपने यहां हिजड़ा बनना एक आध्यात्मिक प्रक्रिया है लेकिन वहां वह वैद्यकीय प्रक्रिया थी। वहां पुरुष को औरत और औरत को पुरुष बनाने के लिए हार्मोनल ट्रीटमेंट दी जाती हैं।उनकी सर्जरी की जाती हैं। और बस उसके बाद वह पुरुष बनकर घूम सकता है। किंतु बस कहने से ही सब खत्म नहीं होता। समाज नाम का जानवर तो तब भी खड़ा ही रहता है। कनाडा में भी उन्हें

बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। समाज उन्हें झट से अपनाता नहीं है। परिवार ही जब नहीं अपनाता तो समाज का क्या है? किसी की नौकरी चली जाती है, किसी को जान से मारने की धमकी दी जाती है। फिर ट्रांसजेंडर सर्जरी होने के बाद बहुत से लोग नौकरियां बदलते हैं, क्योंकि सामने से कोई कुछ नहीं कहता हो,फिर भी ताने मारना, दोस्तों का दूर जाना, उपेक्षा करना यह होता था। ये सब ना चाहो तो जहां आपका अपना इतिहास किसी को पता नहीं हो ऐसी जगह नौकरी करना। पर ये सब हर बार और के साथ नहीं होता था। धीरे-धीरे वहां भी ट्रांसजेंडर की हालत सुधर रही है।ज्यादातर समाज उन्हें अपनाने लगा है।"४ इसके बाद लक्ष्मी एम्स्टर्डम न्यूयॉर्क (अमेरिका) की यात्रा करती है। वहां पर वे परालैंगिक समुदाय के लोगों की स्थिति को जानने का प्रयास करती हैं। यहां पर वे अनुभव करती हैं कि व्यक्ति भले ही परालैंगिक समुदाय से हो, लेकिन वह मानव होने के नाते मानवीयता के आधार पर उसे समाज में सम्मान दिया जाता है। इस अनुभव को व्यक्त करते हुए लक्ष्मी रहती हैं कि-"एम्सटर्डम के लोगों का नजरिया सभी के प्रति ट्रांसजेंडर की तरफ देखने का भी बिल्कुल खुला था। वहां ट्रांसवूमेन थीं, ट्रांसमेन भी थे। मतलब स्त्री बने हुए पुरुष और पुरुष बनी हुई औरतें।पर यह बिल्कुल नॉर्मल जिंदगी बसर कर रहे थे।वहां के आम लोगों की तरह।"५ इसी तरह का अनुभव लक्ष्मी को अमेरिका के न्यूयॉर्क शहर में भी आता है। इस संदर्भ में वे बताती हैं कि-"अमेरिका में आज सरकारी कार्यालयों में ट्रांसजेंडर काम कर रहे हैं। मल्टीनेशनल कंपनियों में काम कर रहे हैं। उन कंपनियों में वे बड़े-बड़े ओहदों पर हैं।40 साल पहले वो लड़े और अब उन्हें उनके अधिकार मिल गए। आज वो समाज में सम्मान के साथ जिंदगी बसर कर रहे हैं।"६ इसके बाद लक्ष्मी थाईलैंड के परालैंगिक समुदाय की स्थिति का जायजा लेती है। वहां पर परालैंगिक समुदाय के लोगों को कथाय कहा जाता है। वहां के समाज में ये कथाय समाज में सहज रूप में विचरण करते नजर आते हैं। इस पर अपनी अनुभूति को व्यक्त करते हुए लक्ष्मी कहती हैं कि-"घूमते फिरते हमें यह कथाय बिल्कुल सहज नजर आते हैं। स्कूल कॉलेजों में,दुकानों में, रेस्टोरेंट्स में, ब्यूटी पार्लरों में काम करने वाले, सीखने वाले, कारखानों में काम करने वाले और बड़ी संख्या में एंटरटेनमेंट और टूरिस्ट सेंटर में.... अर्थात सेक्स वर्कर्स के रूप में भी।कथाय सिर्फ शहरों में ही नहीं गांव-गांव में भी दिखाई देते हैं।वहां के समाज ने उन्हें इतना सहज अपनाया है कि औरतों की सौंदर्य प्रतियोगिता के साथ-साथ वहां इन कथाय लोगों की भी सौंदर्य प्रतियोगिता होती है।"७ मलेशिया में परालैंगिक समुदाय की स्थिति इतनी कुछ खास नहीं है। वहां पर धर्म का प्रभाव इस समुदाय पर अत्याधिक मात्रा में देखा जा सकता है। यह समुदाय धर्म के तले दबा हुआ है। फलस्वरूप परालैंगिक समुदाय विविध समस्याओं से त्रस्त है।लक्ष्मी मलेशिया की कार्तिनी स्लामा के आधार पर इस समुदाय की स्थिति को जानने का प्रयास करती हैं। तब उन्हें ज्ञात होता है कि-"कार्तिनी स्लामा जैसे मलेशिया के बहुत से मुस्लिम ट्रांसजेंडर धर्मभीरू हैं।पर धर्म उनके सभी सवालों का जवाब नहीं दे पाता।उनके सभी समस्याओं का हल नहीं दे पाता।"८ इस प्रकार लक्ष्मी वैश्विक स्तर पर अनेक देशों का भ्रमण कर परालैंगिक समुदाय की परिस्थिति का जायजा लेती है और उसके माध्यम से उसे यह पता चलता है कि बाहर के देशों में इस समुदाय की स्थिति भारत से बेहतर है। इसलिए इस समुदाय को भारतीय समाज में सम्मान दिलाने के लिए लक्ष्मी एकसूत्र में बांधने का प्रयास करती हैं। इस संदर्भ में अपना मत व्यक्त करते हुए लक्ष्मी रहती हैं कि-"मेरी एक्टिविज्म जारी है ही, जारी रहेगी भी... ये कार्य ऐसे हैं जिनका होना तो जरूरी है ही पर लोगों के सामने आना भी उतना ही या उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।हमारा हिजड़ा समाज है ही ऐसा, जो अलग लगता है पर अलग जाना नहीं चाहता। उसे लोग उसी की तरह जानने लगे। इसलिए बाकायदा कोशिश करनी पड़ेगी।जैसे-जैसे मुझे इसका एहसास होने लगा वैसे-वैसे मैं उस दिशा में प्रयास करने लगी।"९

सार रूप में कहा जा सकता है कि 'मैं हिजड़ा... मैं लक्ष्मी' केवल एक आत्मकथा नहीं, बल्कि एक सामाजिक दर्पण है जो परालैंगिक समुदाय की पीड़ा, संघर्ष, साहस और आत्म-सम्मान की यात्रा को वैश्विक संदर्भ में उजागर करती है। रचनाकार ने प्रस्तुत रचना के द्वारा अपने जीवन के अनुभवों के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि परालैंगिक व्यक्ति न केवल भारत में नहीं बल्कि पूरी दुनिया भर में अपनी पहचान, सम्मान और अधिकार के लिए जूझ रहे हैं।

इस रचना के द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि मानवीय लैंगिक विविधता प्राकृतिक है और इसे स्वीकार करना चाहिए। लक्ष्मी की आवाज़ उन लाखों परालैंगिक व्यक्तियों की आवाज़ बन जाती है जो अब तक खामोश थे। उनका संघर्ष संयुक्त राष्ट्र से लेकर भारतीय अदालतों तक यह सिद्ध करता है कि बदलाव संभव है – बशर्ते समाज संवेदनशीलता और समावेशिता की ओर अग्रसर हो। अतः 'मैं हिजड़ा... मैं लक्ष्मी' न केवल साहित्यिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण कृति है, बल्कि यह वैश्विक मानवाधिकार विमर्श में परालैंगिक समुदाय की जगह को पुनर्परिभाषित करती है। यह रचना समाज से अपील करती है कि वह हिजड़ा या ट्रांसजेंडर व्यक्ति को केवल सहानुभूति नहीं, सम्मान और समान अवसर दे।

**संदर्भ ग्रंथ सूची**

१)सं. डॉ. एम फिरोज खान-थर्ड जेंडर और साहित्य, पृष्ठ.०१
२)वही, पृष्ठ.१४६
३) लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी- मैं हिजड़ा.... मैं लक्ष्मी, पृष्ठ.२९
४)वही, पृष्ठ.७६-७७
५)वही, पृष्ठ.८२
६)वही, पृष्ठ.९८
७)वही, पृष्ठ.१०१
८)वही, पृष्ठ.१०२
९)वही, पृष्ठ.१०३